एदुअर्दो गालेआनो मौजूदा दौर के सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले लातिन अमेरिकी लेखकों में शुमार किये जाते हैं। उनका लेखन जनपक्षधरता की जीती-जागती मिशाल है। अकारण नहीं है कि सैन्य तानाशाहियों ने न केवल गालेआनो की पुस्तक 'लास बेनास' को प्रतिबंधित किया, बल्कि उन्हें 'खतरनाक' लोगों की फेहरिश्त में भी रखा। यहां मौजूद यह अंश उनकी पुस्तक 'पातास आरीबा : ला एस्कुएला देल मुंदो अल रेबेस - उलटबांसियां : उल्टी दुनिया की पाठशाला' से लिया गया है, जो साम्राज्यवादी-पूंजीवादी ताकतों द्वारा अश्वेतों और आदिवासियों के दमन और उत्पीड़न से संबंधित है। रंगभेद और दमन की इस दास्तान में हम अपने समाज के पूर्वग्रहों और इतिहास की अनुगूंज भी सुन सकते हैं। इस पुस्तक का अनुवाद कर रहे हैं जे.एन.यू. के स्पैनिश भाषा-साहित्य के शोधार्थी पी.कुमार मंगलम।

रंगभेद और पुरुष वर्चस्व का पहला सबक

- एदुअर्दो गालेआनो

किसी जगह पर काम करने वाले लोगों को हमेशा अपने से ऊपर के बाबुओं की जी हुजूरी करनी चाहिए उसी तरह जैसे औरतों को हमेशा पुरुषों की बात माननी ही चाहिए। कुछ लोगों का जन्म ही हुक्म देने के लिये होता है।

जिस तरह किसी व्यक्ति के पुरुष होने भर से उसे महिलाओं पर हुकुम चलाने का अधिकार मिल जाता है, उसी तरह रंगभेद भी किसी खास रंगवाले परिवार में जन्म लेने भर से किसी व्यक्ति को हमेशा के लिये नफरत और दोयम दर्जे की जिंदगी दे देता है। यह वैसे ही है जैसे गरीबी के लिये शोषण की ऐतिहासिक प्रक्रिया को नहीं, बल्कि गरीबों को ही जिम्मेवार बता दिया जाता है। गरीबी और रंगभेद के मारे लोग तो अपना यही नसीब लेकर पैदा होते हैं। यह सब कुछ यहीं नहीं रुकता। यह भी मान लिया गया है कि समाज के हाशिये पर फेंके गए ये लोग स्वभाव से ही अपराधी होते हैं। ऐसे में काली चमड़ी के किसी गरीब के दिखते ही अपराध और डर का भयानक गैरजरूरी माहौल बना दिया जाता है।

हमारे कुछ भ्रम, मान्यताएं और करतूतें

दोनों अमेरिकी महादेशों के अलावा यूरोप में भी पुलिस की कार्रवाई अपने रंग के खिलाफ समाज में मौजूद पूर्वग्रहों के शिकार लोगों को ही निशाना बनाती है। पुलिसिया शक के घेरे में आया हर वो व्यक्ति जो गोरा नहीं है, वो कानूनों के किताबों से बाहर सबके दिलो-दिमागों में दर्ज इसी भ्रम को किसी भी कानून से कहीं ज्यादा कठोर बना देता है कि अपराध का रंग हर हाल में काला, भूरा या कम से कम नीला तो होता ही है।

इस तरह कुछ लोगों को अपराधी बता देने वाली यह सोच दरअसल इतिहास की सच्चाइयों को जानबूझकर नजरअंदाज करती है और ज्यादा नहीं तो अगर सिर्फ पांच सौ सालों की बात करें तो यह मानना पड़ेगा कि गोरी चमड़ी के लोगों ने कम अत्याचार नहीं किये हैं। यूरोप ने 18-19 वीं सदी में हुए पुनर्जागरण के समय वहां के गोरे लोग दुनिया की कुल आबादी का मुश्किल से पांचवां हिस्सा थे, लेकिन इन्हीं मुट्ठी भर लोगों ने खुद को सीधे भगवान द्वारा पुनर्जागरण का संदेश दुनिया भर में फैलाने (या कहें कि थोपने) वाला दूत घोषित कर रखा था। अपने उसी भगवान के नाम पर इन 'सभ्य गोरों' ने दोनों अमेरिकी महाद्वीपों में वहां के जितने मूलनिवासियों को मारा उनकी गिनती तो की जा सकती है (लेखक के अनुसार यह संख्या लाखों में है) लेकिन अफ्रीका में ऐसे ही लोगों की संख्या का आंकड़ा किसी के पास भी नहीं है।

अमेरिका और अफ्रीका के मूल निवासियों का खून चूस लेने की हद तक शोषण करने वाले, उनके शरीर का कारोबार करने वाले तथा उनकी आगे की पीढ़ियों तक को वहां के कारखानों और बागानों में खटने वाले दास बना देने वाले यूरोप के राजा गोरे ही थे। यूरोप की 'सभ्यता' जब दुनिया के चारों कोनों में अपना पांव पसार रही थी तब गुलाम देशों के लोगों पर बंदूक के बल पर थोपे गए सारे भयंकर कानून गोरे कानून ही थे। चौंसठ लाख से भी ज्यादा लोगों, जिनमें ज्यादातर गरीब ही थे, की हत्या करने वाले पिछली सदी के दो विश्वयुद्धों के अगुआ यूरोपीय देशों के शासकों की चमड़ी गोरी ही थी। जिन्होंने जापानियों को भी अपने साथ मिला लिया था। .... यहूदियों को जहरीले गैस चैंबरों में मारने वाले नाजी भी गोरे ही थे।

यही बात कि कुछ लोग तो पैदा ही आजाद रहकर जीने के लिये हुए हैं और बाकियों को तो गुलाम ही होना और रहना है दुनिया भर में आज तक हुए सभी साम्राज्यवादी कब्जों को जायज ठहराती आयी है। लेकिन यूरोप की लगातार बढ़ती लालच को पूरा करने के लिये इंसानी नैतिकता को ताक पर रखते हुए रंगभेद की असली शुरुआत तो पुनर्जागरण और अमेरिका पर यूरोपीय कब्जे के साथ ही हुई। तभी से दूसरे देशों पर कब्जा करने और बनाए रखने के लिये रंगभेद का इस्तेमाल होता आया है। जिन देशों पर कब्जा किया जाता है, वहां के ज्यादातर लोग अपने काले या गहरे रंग के वजह से अपना ही देश चलाने के लायक नहीं समझे जाते और गोरे खुद-ब-खुद

उनके भाग्यविधाता हो जाते हैं। कब्जा करने वाले देशों में भी शासन प्रक्रिया में गोरों की ही चलती है और बाकी रंग वाले लोग तो खुद को हाशिये पर फेंके गए लोगों में ही पाते हैं। यह बात तो पक्की है कि साम्राज्यवाद को जितनी जरूरत बारूद की पड़ी उतना ही रंगभेद भी उसके काम आया और तब के रोम में बैठे पोप का काम ही भगवान के नाम पर यह सबकुछ जायज ठहराना हो गया था। उस दौर के अंतर्राष्ट्रीय कानून भी कब्जे और लूट को कानूनी चेहरा देने के लिये ही बनाए गए तथा इस सबके बीच रंगभेद बड़े धड़ल्ले से पुलिसिया अत्याचारों, गुलाम लोगों एवं मुल्कों की लूट व शोषण को छिपाने और इतिहास तथा लोगों की याद्दाश्त से गायब कर देने के लिये काम आता रहा।

कभी स्पेन के कब्जे में रहे दक्षिण अमेरिका में तो अलग-अलग नस्लों के आपसी संबंधों की पैदाइश रहे व्यक्तियों की सामाजिक हैसियत बताने के लिये नई शब्दावली ही गढ़ ली गई। उदाहरण के लिये 'मुलातो' (Mulatto) शब्द उनके लिये काम लाया जाता रहा है जो गोरी और काली नस्ल के आपसी संबंधों का नतीजा हैं। यह शब्द दरअसल 'मूला' (Mula) शब्द से बना है जिसका अर्थ है खच्चर, अर्थात गधे और घोड़ी की पैदाइश। इसके अलावा और भी ऐसे ही कई शब्द बनाए गए जो स्पेनियों के लिये 'नई दुनिया' रही इस धरती में यूरोपीय-अमेरिकियों और अफ्रीकियों के आपसी संबंध से निकले कई रंग के लोगों की पहचान बनते आए हैं। इनमें से कई नाम सीधे-सादे हैं जैसे कि 'कास्तिशो' (Castizo, पुराना), 'क्वारतेरोन' (Cuarteron, नस्ल का चौथाई हिस्सा), 'किंतेरोन' (Quinteron, नस्ल का पांचवा हिस्सा), 'मोरिस्को' (Morisco, इस्लाम से धर्मांतरित ईसाई), 'लोबो' (Lobo, असभ्य) आदि, जबकि कुछ दो-तीन शब्दों को जोड़कर बनाए गए हैं जैसे कि 'तोर्ना आत्रास' (Torna Atras, वापस जाओ), 'आइ ते एस्तास' (Ahi Te Estas, तुम वहां हो), और 'नो ते एन्तिएन्दो' (No Te Entiendo, मैं तुम्हें नहीं समझा)।

इन सभी नामों में 'नो ते एन्तिएन्दो' (मैं तुम्हें नहीं समझा) इतिहास की सच्चाइयों को सबसे सही ढंग से बयान करता है। अमेरिकी महाद्वीप के यूरोप के सामने आने से लेकर अब तक के पांच सौ साल गोरे लुटेरों और कब्जा करने वालों के अमेरिकी वास्तविकताओं को नहीं समझ पाने के गवाह है। कोलम्बस ने अमेरिकी मूलनिवासियों को हिन्दुस्तानी, क्यूबा के लोगों को चीनी और हैती के बाशिंदो को जापानी समझा और पेश किया था। कोलम्बस के भाई बार्तोलोमे ने ही पहली बार मौत की सजा देने की शुरुआत की थी, जब छः लोगों को सिर्फ इस बात के लिये जिंदा जला दिया गया कि उन्होंने यह मानकर कि नए धर्म के भगवान पैदावार बढ़ाने वाले होंगे कुछ ईसाई चिन्हों को बीजों के साथ जमीन में डाला था। अमेरिकी महाद्वीपों को कब्जाने वाले जब मैक्सिको के पूर्वी तट पर पहुंचे तब उन्होंने वहां के लोगों से उस जगह का नाम पूछा। अजनबी लोगों की भाषा से बिल्कुल अनजान मूलवासियों ने यह कहना चाहा कि वे उन्हें समझ नहीं पा रहे। इसके लिये उन्होंने अपनी माया संस्कृति की भाषा के 'युकातान' शब्द का प्रयोग किया। तब से इस जगह का नाम ही 'युकातान' पड़ गया। दक्षिण अमेरिका के बिल्कुल बीच में मौजूद

एक झील का नाम पूछने पर वहां के लोगों ने उन्हें पानी के लिये पूछा और अपनी भाषा का शब्द 'इपाकाराई' का इस्तेमाल किया जो आज के पराग्वे की राजधानी आसुन्सियोन से सटी इस झील का नाम भी बन चुका है। इसी तरह जब यह बात आई कि यहां के मूल निवासी कैसे दिखते और रहते हैं तब 'दिक्सिओनारे उनिवर्सल' (विश्वकोश) लिखने वाले फ्रांसीसी लेखक आंटोश्ने फुरेटिएरे ने उन्हें गंदा और बालों से भरे शरीर वाला बतलाया, जबकि हकीकत में उनके शरीर पर बाल बहुत ही कम होते थे। बात तो यह थी कि लेखक यूरोप में गढ़े और मान लिये गए इस भ्रम को ही दुहरा रहा था कि यूरोप को छोड़कर बाकी जगहों पर 'जंगली' और 'असभ्य' लोग तो बालों से भरे बंदर की तरह ही दिखते होंगे। 1774 में ग्वांटेमाला के गांव 'सान अंद्रेस इत्जापान' के एक ईसाई धर्म प्रचारक ने यह जिक्र किया कि वहां के मूलनिवासी ईसा मसीह की मां के रूप में पूजी जाने वाली वर्जिन मेरी की नहीं, बल्कि मेरी के पांवों के पास पड़े सांप को पूजते थे, जो उनकी संस्कृति की एक देवी और संकट के समय में उनकी मदद करने वाली एक मानी जाती थी। साथ ही, उस प्रचारक ने यह भी बताया कि वे एक प्रमुख ईसाई चिन्ह सलीब की पूजा भी इसलिये करते थे क्योंकि यह अपने आकार की वजह से धरती और बारिश के मिलन का आभास देता है। ठीक उसी वक्त वहां से काफी दूर जर्मन कानिसबर्ग शहर में उस समय के मशहूर दार्शनिक इमैनुएल कांट यह फरमान सुना रहे थे कि "अमेरिका के मूल निवासी तो सभ्यता से कोसों दूर और सभ्य जीवन के लिये बिल्कुल अयोग्य थे और आज नहीं तो कल खत्म होने वाले थे।" यह बात और है कि कांट ने कभी अमेरिका देखा भी नहीं था। जो भी हो, कांट की बात सच ही साबित हुई, कुछ खुशकिस्मतों को छोड़कर लगभग सभी अमेरिकी मूलनिवासी यूरोप के 'सभ्यों' द्वारा लाई गई भयानक बीमारियों और खेतों तथा सोने-चांदी की खानों में जबरदस्त घातक और कभी न खत्म होने वाली बेगार से एक-एक करके मरते रहे।

पहचान

"मेरे पूर्वज कहां हैं? मैं किन्हें याद करूं और अपना मानूं? मेरी जड़ें कहां है? मेरा सबसे पहला पूर्वज बहुत सालों पहले अमेरिका का एक मूल निवासी था। आप गोरे लोगों के पूर्वजों ने तो उस आदमी को उसके जीते-जी ही उसकी पहचान से काट उसपर अपनी सभ्यता थोप दी। वो खत्म हो गया। और मैं अब उसका ही एक भूला-बिछड़ा और एक अनाथ अंश हूं।"

मार्क ट्वेन के शब्द जो एक गोरे थे। (न्यूयार्क टाइम्स को 26 दिसम्बर 1891 को दिये गए साक्षात्कार में)

और बहुत सारे लोगों को सरेआम कोड़े मारे गए, जिंदा जलाया या फांसी चढ़ाया गया क्योंकि वे अपनी संस्कृति और जिंदगी का हिस्सा बन चुकी (लेकिन नए ईसाई धर्म की नजर में पाप) मूर्तिपूजा को छोड़ने के लिये तैयार नहीं थे। गोरों की निगाह में 'सभ्यता' के लिये बिल्कुल अयोग्य ये लोग दरअसल प्रकृति के साथ पूरे

ताल-मेल की जिंदगी जीते थे और उनके इस विश्वास को आज के मूलनिवासी भी जी रहे हैं कि धरती और उस पर चलने वाली या उससे निकलने वाली हर चीज पवित्र और इसीलिये बचाए जाने लायक है।

सदियां बीत गईं, लेकिन खुद को सभ्यता का इकलौता पहरेदार मानने वालों के लिये अमेरिका के मूल निवासी जंगली ही बने रहे। आजाद दक्षिण अमेरिका के नए देश अर्जेंटीना में अठारहवीं सदी के आखिर में दक्षिणी भाग में बसे आदिवासियों को नए शासक वर्ग की देश को 'विकसित' और 'आधुनिक' बनाने की जिद की कीमत अपनी जान देकर चुकानी पड़ी। तब सेना ने इनको बिल में घुसे चूहों की तरह घेरकर मार डाला था। इस पूरे हत्यारे अभियान का नाम 'रेगिस्तान की सफाई और विकास की मुहिम' था। यह और बात है कि तब का यह क्षेत्र आज के मुकाबले कहीं ज्यादा हरा-भरा था। आज तो वहां पातागोनिया का अंतहीन रेगिस्तान ही दिखता है। अभी कुछ साल पहले तक अर्जेंटीना में पैदा होने वाले बच्चों को आदिवासी समुदाय में प्रचलित नाम देने की मनाही थी। और तो और ऐसे सभी नए नामों को विदेशी घोषित कर दिया गया था। इस क्षेत्र में काम करने वाली मानवविज्ञानी कातालिना बुलिउबासिच ने यह सच्चाई सामने लाई कि उत्तरी भाग के पहाड़ी इलाकों के सरकारी रिकॉर्डों से बाहर रह गए आदिवासियों को सरकारी मुख्यधाना का हिस्सा बना देने का नायाब तरीका ढूंढ़ लिया गया था। उनके आदिवासी नामों की जगह उन्हें जो नाम दिये गए थे वास्तव में वे सभी नाम विदेशों से आए थे। ये नाम थे शेवरलेट, फोर्ड (दोनों मशहूर अमेरिकी कार कंपनियां) वेइंतिसीएते (स्पेनी भाषा का शब्द जिसका शाब्दिक अर्थ है सत्ताइस) त्रेसे (स्पेनी भाषा का तेरह), यहां तक कि कुछ को मूलवासियों को हाशिये पर डाले रखने वाली नीतियों के झंडाबरदार रहे देश के पूर्व राष्ट्रपति दोमिंगो फौस्तिनो सारमिएंतो का नाम भी दे दिया गया।

न्याय प्रक्रिया

1986 मैक्सिको की संसद के एक सदस्य चियापास क्षेत्र के सेरो उएको जेल के दौरे पर गए। वहां उनकी मुलाकात त्सोत्सिल नामक मूलवासी समुदाय के एक कैदी से हुई जिसे अपने पिता की हत्या के जुर्म में तीस साल कैद की सजा सुनाई गई थी, लेकिन उन्हें यह मालूम हुआ कि उसका मृत घोषित पिता तो रोज ही उसके लिये ऑमलेट और सोयाबीन ले आता था।

बात यह थी कि उस कैदी का पाला एक ऐसी न्याय व्यवस्था से पड़ा था जहां मुजरिम से सवाल-जवाब करने और सजा सुनाने की भाषा स्पेनी थी जो कि उसकी समझ के लगभग बाहर ही थी। पुलिस के डंडे वाले कानून ने उससे अपना दोष कुबुलवा ही लिया था।

आजकल आदिवासियों की मेहनत और अकसर उनकी जिंदगी के बल पर ही सिर्फ कुछ लोगों का विकास करने और भारी-भरकम उद्योग तथा बाजार की लुभावनी दुनिया की चाह रखने वाले देश इन्हीं आदिवासियों को एक

बोझ से ज्यादा कुछ नहीं मानते। ग्वातेमाला में जहां लातिन अमेरिका के कुछ चुनिंदा देशों की तरह गुलामी के पांच सौ सालों की तमाम ज्यादतियों के बावजूद आदिवासी आज भी जनसंख्या का बड़ा हिस्सा है, वहां भी इनकी हालत हाशिये पर खड़े अल्पसंख्यक समुदाय के सबसे शोषित तबके की है। यहां के गोरे और काले रंग के बीच के 'लादीनो' (दरअसल, दोनों रंगों के लोगों की कलमी संताने) दिन-रात अमेरिका के मायामी शहर के धनी लोगों की तरह कपड़े पहनने और जिंदगी जीने की कोशिश अपने ही देश के आदिवासियों से बेहतर दिखने और बनने की चाह के लिये करते हैं। इस सबके बीच हजारों की संख्या में विदेशी सैलानी देश के 'चीचीकास्तेनांगो' नाम के बाजार का रुख करते हैं, जहां वे आश्चर्य के साथ इन्हीं आदिवासियों के हाथो बनी कला और खूबसूरत कल्पना का अद्भुत मेल बनी दुनिया में अपनी तरह की अनोखी कलाकृतियां खरीदते हैं। 1954 में सत्ता हथियाने वाले तानाशाह कार्लोस कास्तिल्यो आरमास की ख्वाहिश ग्वातेमाला को डिजनीलैंड बनाए देने की थी। उनकी सरकारी घोषणाओं के हिसाब से आदिवासियों को अज्ञानता और पिछड़ेपन से बाहर निकालने के लिये उन्हें हाथ की कलाकारी सिखाना जरूरी था। बहरहाल, आरमास अपने महान लक्ष्य को पूरा करने से पहले ही स्वर्ग सिधार गए।

उन देशों में जहां आदिवासी या काले रंग के लोग ज्यादा हैं, वहां इनके बारे में फैलाई गई घटिया बातें उनके शरीर और उससे निकलने वाली गंध तक को घृणा की चीज बना देती है और इसीलिये मांओं द्वारा अपने बच्चों को नहीं नहाने पर यह ताने देना आम बात है कि ''तूं आदिवासी दिख रहा है या किसी काले आदमी की तरह दुर्गंध कर रहा है।'' लेकिन इस धरती पर स्पेनी और पुर्तगाली आक्रमणकारियों के साथ आए इतिहासकारों के लिखे पन्ने पलटें तो यह सच सामने आ ही जाता है कि आक्रमणकारी शुरू-शुरू में कैसे ये कब्जा करने वाले आदिवासियों की बिला नागा नहाने-धोने की आदत से स्तब्ध थे और तभी से इन्हीं आदिवासियों और आगे चलकर बंदी बनाकर लाए गए अफ्रीकी गुलामों से ही लातिन अमेरिका के बाकी लोगों ने साफ सुथरा रहना सीखा है। यह सब भुला दिया गया है और इन समुदायों को धन्यवाद का एक छोटा शब्द भी नसीब नहीं है।

इसाई धर्म की मान्यताओं के हिसाब से स्नान करना शरीर को आनन्द देने के वजह से पाप माना जाता रहा है। स्पेन में ऐतिहासिक धार्मिक अदालतों के दौर में कोई भी सिर्फ अपनी नहाने की आदत भर से ही ईसाई धर्म के खिलाफ और इस्लामी तौर-तरीकों वाला मान लिया जा सकता था और इसीलिये जिंदा जला दिया जा सकता था। आज की बात करें तो स्पेन में समुंदर किनारे गर्मी की छुट्टियों में मौज-मस्ती करने वाले शेख ही असली अरब हैं। बाकी गरीब रह गए अरब वैसे तो सिर्फ मामूली मुसलमान हैं और रंगभेदियों के लिये तो वे गंदगी से बजबजाते मुसलमान हैं। हालांकि यहां के ग्रानादा शहर के 'अल आम्ब्रा' नाम के इस्लामी महल को जिस किसी ने भी देखा है वो जानता है कि इस्लामी सभ्यता में पानी का महत्व तब से रहा है, जब ईसाई धर्म पीने के अलावा पानी के किसी भी अन्य उपयोग की मनाही थी। वास्तव में यूरोप में नहाना बहुत बाद में लोकप्रिय हुआ, लगभग उसी वक्त जब टी.वी. पहले-पहल लोकप्रिय हुआ।

देवी

इएमान्या की पूजा वाली रात सारा समुद्र तट त्यौहार की खुशी में डूब जाता है। बाहिया, रियो डी जानेईरो, मोंतेवीदियो जैसे अन्य समुद्री शहर समुद्र की इस देवी की पूजा की खुशी मनाते हैं। लोगों की भारी भीड़ बालू पर मोमबत्तियों की लड़ियां लगाती है और साथ लाए सफेद फूल, इत्र, गले के हार, केक, मिठाइयां और देवी को भाने वाली बाकी भेटें और चढ़ावे समुद्री लहरों के रास्ते उन्हें भेजती है। इसके बाद देवी को मानने वाले मन्नतें मांगते हैं।

किसी को दबा हुआ खजाना चाहिए, किसी को अब तक नहीं मिला प्यार, कोई बिछड़ गए लोगों की वापसी मांगता है और कोई भगवान के पास गए लोगों की दुबारा वापसी चाहता है। मन्नतों और दुआओं के इन चंद लम्हों में ही शायद इन लोगों को यह जादुई एहसास होता है कि देवी उन्हें सुन रही हैं और उनकी असंभव सी लगने वाली दुआएं कबूल भी कर रही हैं। इन चंद पलों का जादुई एहसास मोमबत्ती की रोशनी में जल रहे इनके पूरे वजूद को और चमका देता है और किसी मोमबत्ती सरीखा ही बना देता है।

समुद्री लहर जब इनकी भेंट अपने साथ बहा कर ले जा चुकी होती है तब ये लोग समुद्र की तरफ मुंह किये, इस सावधानी से कि देवी की तरफ उनकी पीठ न पड़े, धीरे-धीरे वापस शहर की ओर लौटते हैं।

यह मान लिया गया है कि आदिवासी और काले लोग कायर तथा डरपोक होते हैं। लेकिन यही लोग अमेरिकी महाद्वीपों में हमेशा ही कभी उपनिवेशवादी युद्धों में कभी आजादी की लड़ाई और आजादी के बाद अमेरिका के देशों के आपसी गृह युद्धों व सीमाओं को लेकर होने वाली लड़ाइयों में चलती-फिरती बंदूकों और बम की तरह इस्तेमाल भी हुए हैं। वे सिपाही आदिवासी ही थे जिनका इस्तेमाल स्पेनी साम्राज्यवादियों ने इस क्षेत्र के आदिवासियों को मारने के लिये किया। अठारहवीं सदी में छिड़ने वाली आजादी की लड़ाइयां हमेशा युद्ध की पहली पंक्ति में झोंक दिये गए अर्जेंटीना के काले लोगों के लिये बरबादी ही लाई। आजादी मिलने के बाद हुए पराग्वे युद्ध के मैदान ब्राजील के कालों लोगों की लाशों से अटे पड़े थे।

आदिवासी ही चिली के खिलाफ पेरू और बोलिविया की संयुक्त सेना के अगुआ दस्ते बने। ये लोग जिन्हें पेरू के लेखक रिकार्दो पाल्मा बिल्कुल ही उपेक्षित और गया-गुजरा मानते थे, इस पूरी मारकाट के सबसे ज्यादा शिकार बने और वह भी उस समय जब देशभक्ति का झंडा बुलंद करने वाला शासक वर्ग जनता को युद्ध में झोंककर खुद भाग खड़ा होता था। हाल के दौर में एक्वाडोर और पेरू के बीच हुए युद्ध में मरने वाले आदिवासी ही थे और ग्वांटेमाला की पहाड़ियों में बसे आदिवासियों के गांव के गांव उजाड़ने वाली सरकारी फौजों के सिपाही

भी आदिवासी थे। इन फौजों के अफसरान, आधे आदिवासी और आधे गोरे नस्ल की पैदाइश, ऐसे हर अपराध से अपने ही खून के आधे हिस्से की बरबादी लिख रहे थे।

आदिवासियों के बारे में तमाम तरह की भ्रांतियां हैं। जैसे कि लोग कहते हैं कि ''तुम तो किसी काले आदमी की तरह काम कर रहे हो''। ये कहने वाले वही लोग हैं, जो यह भी कहते हैं कि काले तो आलसी और कामचोर हैं। लोग कहते हैं ''गोरा आदमी दौड़ता है और काला आदमी भागता है''। यह काले आदमी की बड़ाई करने के लिये नहीं, बल्कि यह बताने के लिये होता है कि गोरा जो दौड़ता है वह एक सामान्य इंसान है, जो कभी कुछ भी गलत नहीं करता और जो काला इंसान जो भागता है, वह तो दरअसल चोर है, जो गोरे को लूट कर भाग रहा होता है। यहां तक कि लातिन अमेरिकी साहित्य में सामाजिक रूप से पिछड़े मैदानी क्षेत्रों में मवेशी चराने वालों की बात करने वाली किताब *मातिर्न फिएर्रो* का मुख्य किरदार भी यही कहता है कि काले लोग चोर ही होते हैं और दुनिया भर के कष्ट झेलने के लिये ही पैदा होते हैं। और उनके बारे में अपनी यह राय रखता है :

''एक आदिवासी आदिवासी ही है, वह जैसा है वैसा ही रहना चाहता है। वो तो पैदा ही चोर बनने के लिये हुआ है और चोर रहकर ही मर जाता है।''

काले लोग चोर होते हैं और आदिवासी भी। ये पूरी बात यह साबित करती है कि जिनके साथ सबसे ज्यादा अन्याय हुआ है और जो सबसे ज्यादा लूटे गए हैं, वे ही चोर भी ठहराए गए हैं।

Translated by **P. Kumar Mangalam**

Email - **pkmangalam@gmail.com**

स्त्री उत्पीड़न से संबंधित इस पुस्तक का अगला अंश हम जल्दी ही उपलब्ध कराएंगे।

The Translator has given his kind consent to produce this article on the website.